वर्तमान राजनैतिक सन्दर्भों में वेदों में वर्णित राष्ट्रीय धर्म एवं मानव धर्म की उपयोगिता

हमारे भारतीय परम्परा में वेद सबसे प्राचीनतम ग्रंथ हैं इस बात को विश्व के सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है अर्थात वेद मानव सभ्यता के विकास के प्रथम मूल श्रोत हैं। उनके अन्तर्गत मानव भाव के लिए उपदेशों का वर्णन समाहित है। मानव के गर्भाधान से लेकर तथा उसके जन्म से समस्त जीवन पर्यन्त तथा उसके मृत्यु पर्यन्त तक की सफलता पूर्ण शिक्षा को प्रतिपादित किया गया है। अर्थात १६ संस्कार एवं आध्यात्मिक उपदेश जो उपनिषद के नाम से जाना जाता है, इस दिव्य ज्ञान के माध्यम से मानव उस ब्रह्म का साक्षात्कार कर लेता है। जिसे हम बैकुंठ या मोक्ष कहते हैं। वेदों में उपनिषद का ज्ञान अंतिम ज्ञान है। इस प्रकार ये हमारे वेदों में उप मानव कल्याणार्थ के लिए विषय प्रतिपादित किये गये हैं। जिसमे वेद वर्णित राष्ट्र धर्म का उल्लेख किया गया है। उसी विषय पर हम थोड़ा सा समझने का प्रयास करेंगे। यजुर्वेद का निम्न लिखित मंत्र है जिसमें धर्म राष्ट्र धर्म का सांगोपांग वर्णन स्पष्ट रूप से मिलता है। मन्त्र इस प्रकार है -

भाव यह है कि विश्वमावन ब्राह्मण ब्रह्मतेज, से सम्पन्न हों। राष्ट्र के क्षत्रिय शूरवीर, धनुर्धर रोगमुक्त और महारथी हों। स्त्रियाँ, शोभामयी, विजयाशील हैं। और इस यजमान का युवापुत्र निर्मय वीर हों। आवश्यकतानुषार वर्षा हो, वनस्पतियाँ फलवती हों।हमारा योग-क्षेम हों।

यजुर्वेद के इस मंत्र से राष्ट्र धर्म का रूप हमें प्राप्त होता है। जों समूचे राष्ट्र के हित की घोषणा करता है। हमारे यहाँ वेदों में संकुचित भावनाओं का समावेश नहीं हैं। अपितु इसमें समग्र मानव मात्र के कल्याण के लिये प्राप्त होता है। हमारे वेदो में संसार के कल्याण एवं विश्व बंधुत्व की भावना से समग्र मानव जाति के लिये संदेश निरूपित किया गया है, इन सिध्दांतों का व्यवहारिक रूप देकर विश्व के समक्ष एक भव्य संदेश प्रस्तुत किया है। इसका वर्णन ऋग्वेद के अन्तर्गत प्राप्त होंता है।

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानानामुपासते॥ (ऋग्वेद)

हम सब मिलकर रहें। तुम अपने धर्म में निरत हो। एक बात बोलो अपने मन मे उन बातों की एक व्याख्या करो। एकचित्त होकर जिस प्रकार देव तुम्हारे प्रदान किये हुए हव्य को ग्रहण करता है। उसी प्रकार अपने सभी विरोधों को त्याग करके उसके समान ही हव्य भाग का आदर करो.

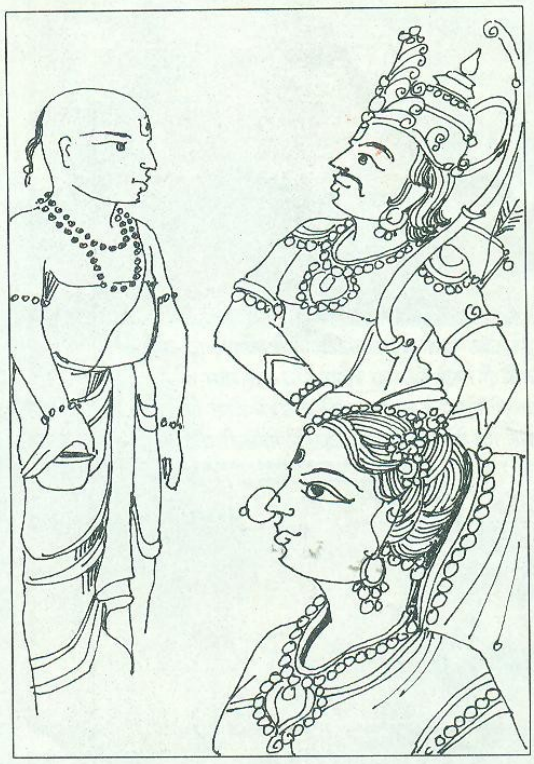

समानो मन्त्रः समितिः समानी
समानं मनः सह चित्तमेषाम्॥
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः
समानेन वो हविषा जुहोमि॥ (ऋग्वेद)

अर्थात् : मन का मंथन एक हो, उसकी उपलब्धि भी सबके लिए समान हो, अन्त प्रदेश विचार धारा और ज्ञानावलोकन सभी के लिए समान हों उत्तम हो। तुम्हारे हृदय में दुसरों का हित साधक सबके लिए एक ही प्रकार का सिद्धान्त निवास करता हों। तुम्हारे मनों में ईश्वराराधनार्थ आहुति-दान की एक समान भावना निवास करती हो। हमारे मनीषियों ने.... मानव मात्र को मनसा वाचा और कर्मणा का आदर्श प्रस्तुत किया है। किसी एक वस्तु का राष्ट्रीकरण के माध्यम सें हम समाज को सुख शांति पहुँचा सकते हैं। तो यदि हम उपरोक्त वर्णित मत्रों का पालन करते हुये निर्वाह करें। तो यह ध्रुव सत्य है कि हमारा मानव समाज एक कल्याणकारी समाज बन जायेगा।

ऋग्वेद में हम सब के हृदय एक हैं। हमारा सब का एक समान रहन सहन खान पान हैं। तथा सबका हृदय उदार हैं। ऐसा कहा गया है -

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।

ये सब आदर्श एक ऐसे समाज का हैं (ऋग्वेद) जो सब प्रकार से जन कल्याण के लिए वर्णित है। वेदों में जहाँ तक वर्णन मिलता है वह समग्र मानव कें हित में ही कही गयी हैं। जैसा कि लिखा है **''सर्वाणि भूतानि मित्रं समीक्षामहे।''** अर्थात् श्रुतियों में प्राणीमात्र की मित्रवत देखने की बात कही गयी है जिसे आज हम उस अतीत की अवहेलना करते हुये व्यक्तिवादी होते हुए अपने ही सुखवैभव के लिए प्रयत्न शील हैं किन्तु प्रयत्नशील होते हुँये भी हमारा अन्तर मन संतुष्ट नहीं हैं। इस परम सत्य को हम और आप अस्वीकार नही कर सकते हैं। अस्तु वह ऐसी कौन सी एक ऐसी अभिष्ट बस्तु है जिसे हम पाकर आत्मिक संन्तुष्टि का अनुभव कर सकते हैं। इस भय पर मैं अपने विबेक के माध्यम से नही भारतीय वेद ग्रंथों के अवलोकन करने से जो तथ्य मिला है। उन्ही के कथनानुसार यदि हम पूरे मानव समाज चलनें लग जाय तों आज की वर्तमान की विडंबना नष्ट प्राय। जायेगी, आम दिन हम समाचार कें मुख्य पृष्ठ पर हत्या, चोरी, डकैती, बलात्कार, अपहरण आदि समाचारों के ''पढ़ने के लिए आदि'' से हो गये हैं। इस प्रकार के निर्मम दुर्घटनाओं को हम अनसुनी सा करते हुए कोई विकल्प के मार्ग का अनुशरण नहीं करते हैं मेरा तात्पर्य यह नही हैं कि इस अमानवीयता के लिये समाज के कुछ लोग समाजिक धार्मिक रूप सें प्रयत्न करते हैं। किन्तु किसी प्रकार की सफलता नहीं मिल रही है। तात्पर्य कहने का यह है कि जब तक वेदों में वर्णित राष्ट्रधर्म एवं मानव धर्म की जो शिक्षा प्रतिपादित की गई है उसकों हम आज के वर्तमान में लाने करने का प्रयास करें। स्पष्ट बात यह है कि हम वेद की शिक्षा से अपने बालक को घर पर ही शिक्षित करें। जब तक माता पिता अपने बालक को वेद की शिक्षा से अवगत नहीं करायेंगे तब तक बालक में मानवता का संस्कार जागृत नहीं हो सकता हैं। यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि बालक को जो शिक्षा दी जाती है, वह उससे शिक्षित होकर पूरे जीवन में संस्कारित हो जाते हैं। अतः मैं विश्व के समग्र उन माता पिताओं से निवेदन करूँगा कि आप सब जिस धर्म के अनुयायी हैं। उन धर्म ग्रन्थों के माध्यम से अपने नव जात शिशुओं कों शिक्षित करने का सफल प्रयास करें। तो यह आज की बरबर्ता पूर्ण दोष समाज से नष्ट हो जायेगा। विश्व के सभी धर्मों मे मानव कल्याणार्थ ही तथ्यों का प्रतिपादन हुआ हैं। अस्तु मैं अपने समग्र भारत वासियों से याचना करूँगा कि वे सब मिलकर धर्म आचरण का प्रसार करते हुये अपने समस्त राष्ट्र एवम् विश्व कल्याणार्थ संकल्प लेकर अग्रेसित हो। हमारे यहाँ महाराज मनु ने मानव कल्याणार्थ धर्म के दस लक्षणों का वर्णन किया है।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रह
धी र्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।। (मनुस्मृति सें)

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभागभवेंत्।। यह उद्घोष यह सूचित करता है सर्व सुखी हो। समाज में कोई दुखी न हो सभी अच्छे विचार वाले हो। सभी की आँखे अच्छी विचार धारा की ओर देखे। अर्थात् समाज में उनकी नजरें मंगलमयी कामना के लिए अवलोकन करती रहें प्राचीन भारतीय साहित्य में वेद सें लेकर १८ पुराण एवम् अन्य ग्रंथो में भी परहित की बात कही गयी है। जिसे हम राष्ट्र धर्म मानव धर्म के नाम से सम्बोधित करते आए हैं। अस्तु आप सब अपने निज के विवेक सें यदि शास्त्रों का पठन पाठन करें तो मेरा विश्वास है कि हम आज इस बदलते हुए परिवेश में मानवता के सहायक सिद्ध हो सकेंगे। परोपकार के दृष्टि कों ध्यान रखतेहुए हमे आज इस मानव रूपी सागर में उतरना होगा। और हम आप सब उन महापुरुषों के उपदेश के माध्यम से सुचारू रूप से कर्म करने के लिए सक्षम हो सकेंगे। अपने अपने समय के अनुकूल इस व्रत को चलाने का मन बना लें तो निश्चय ही आज का वर्तमान समाज सुख शान्ति का अनुभव करने लगेगा। हमारे यहाँ अष्टादश पुराण के रचयिता ब्यास अपने १८ पुराणों के अर्न्तगत का जो साक्ष्य दिया है वह परहित का हैं।

अर्थात् धैर्य, सहनशीलता काम एवं लोभपर संयम चोरी न करना, कामिक,, वाचिक एवं मानसिक पवित्रता, इन्द्रयोंपर अधिकार, ज्ञान, अध्ययनशीलता, सत्य का आचरण और क्रोध का अभाव ये दस धर्म के लक्षण हैं। वस्तुतः ये लक्षण मानव के व्यक्तिगत जीवन के लिए एवं सभी मनुष्यों के हित में सहायक होते हैं। आदि मानव शास्त्र के प्रणेता महाराज मनु नें अपने मनु स्मृति ग्रंथ में मनुष्य के व्यवहार में आने वाले तथ्यों का भली भाँति वर्णन किया हैं। इनकी इस रचना का महत्व धर्म शास्त्रों के अन्तर्गत एवं जन सामान्य को भी पूर्ण रूपेण मान्य हैं। हमारे यहाँ आदि ग्रंथ वेद में एवं पश्चात्य के बने अन्य धर्म ग्रन्थों में राष्ट्रीय हित (मानवीय) हित कों ही प्रमुखता देते हुँए भारतीय समाज की रचना की गयी हैं। उपरोक्त ग्रंथों में विपरीतवादी विचार धाराओं का समावेश नहीं किया गया है समाज के सभी वर्गों के लिए सुख शान्ति मुखरित रूप व्यक्तिवादी विचार धारा का आश्रय लेकर हम भले ही अनुसरण करें किन्तु हम उन गुरूओं की अमर वाणी को विनाश करनेमे सर्मथ न हों सकेंगे।

अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।

- **परोपकार : पुण्याय पापाय परपीडनम्**

इसी बात की पुष्टि हमारे महामना पूज्य पाद गोस्वामी तुलसी दास जी ने अपने राम चरित्र मानस में प्रतिपादित किया है।

परहित सरिष धर्म नही भाई
पर पीडा सम नहि अधमाई
परहित बस जिनके मन माही।
तिनंकहि दुर्लभ कुछ नाहीं।

उपरोक्त तथ्य इस बात कों स्वीकार करते है कि जब समाज का प्रत्येक प्राणी जनहित की भावना को लेकर समाज में जीता है तब उस समय का वर्तमान समाज सुख शान्ति को भोगता हुआ अपने जीवन कों आनंदमय यापन करते हुए वह भी अपने मानवीय हित की विचार धारा से ओत प्रोत होता है। उपरोक्त तथ्यों का भावार्थ यह हैं कि जब हम एक दूसरे के पूरक बन जायेंगे तो यह ध्रुव सत्य है कि उस समय के समाज में कोई किसी के द्वारा सताया न जायेगा भारतीय विचार धारा की पद्धति मनो वैज्ञानिक रूप से प्रतपादित की गयी है। जिसकों आज हम उसके यर्थाथ कों समझनें में समर्थ नहीं हो रहे हैं यही कारण है कि आज का वर्तमान समाज एक दूसरे से प्रताडित है। अधर्म की हमारें यहाँ सर्वथा निंदा की गयी हैं। जिसका प्रमाण हमें इस प्रकार से अपने धर्म ग्रंथों में प्राप्त होता है। जो अधर्म का आचरण करता है। वह समूल नष्ट हो जाता है। **अधर्मेधते तावत् ततो भद्राणि पश्यति ततः सपन्ताज्यति समूलस्तु विनश्यति।** महाराज मनु ने उपरोक्त मंत्र दिया है। कि जो मनुष्य अर्धम का आचारण करके कुछ अर्जित कर लेता है वह थोडे दिन के बाद नष्ट हो जाता है। इसी बात को महाराज भर्तृहरि ने प्रतिपादित किया है। **आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणां। धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।** अर्थात् खाना पीना, नींद, मृत्यु आदि का श्रम और संतानोत्पति ये क्रियाएँ मनुष्य में और पशुओं में एक समान ही होती है केबल एक धर्म ही विशेष रहता है। जो मनुष्य धर्महीन होता है वह पशु ही है इस तरह से हम देखते है कि जीवन के प्रत्येक क्षण में नैतिकता का जो निर्वहन नही करते हैं उन्हें मनुष्य होते हुए भी पशु कहा गया है।

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्यच प्रियमाम्।
स्म्यक् संकल्पजः कामो धर्ममूलमिंद स्मृतम्॥

अर्थात् मानवता का चरम श्रोत केवल मात्र धर्म ही है। श्रुति स्मृति मार्ग का आचरण करने के लिए एवम् काइक वाचिक मानसिक शुद्धि ही धर्म का मूल कारण बताया गया है। ''आत्मनः प्रति कूलानिपरेषां न समाचरेत्'' इत्यादि आप को जो कुछ अच्छा नही लगता है उस कार्य को दुसरे के साथ बर्ताव न करें। ''वसुधैव कुटुम्बकं'' हमारी ही विचार धाराओं से नही बनी है अपितु वह समग्र राष्ट्र मानव मात्र के लिए बनायी गयी है। जिसे हम मानव धर्म समाजिक धर्म आदि कई नामों सें सम्बोधित करते हैं।

धर्मंचर। सर्वे जनाः सुखिनो भवन्तु। सत्यं शिवं सुन्दरम्। 'धारणाद्धर्ममित्याहुः' जिसके द्वारा धारण हो सके वही धर्म है। महर्षि कणाद ने भी कहा है **यतोऽभ्युदयनिःश्रेय ससिद्धि : स धर्मः''** जिससे अभ्युदय हो वही धर्म है। जिससे मोक्ष लाभ हो वही धर्म है। मानव के साथ धर्म का यही -तात्पर्य है। जैसे शरीर के साथ प्राण का लोक कल्याण कारक कर्म को ही मानव धर्म कह सकते हैं। महाभारत में भी धर्म के सम्बन्ध में कहा गया है।

धारणाद्धर्ममित्याहुर्धर्मेण विधृताः प्रजाः।
य स्याद्धारणसंयुक्तः स धर्म इति निश्चय :॥
(महाभारत, शान्ति पर्व)

धर्म धारण करता है, इसलिए उसे धर्म कहा गया है। धर्म प्रजा को धारण करता है। जो धारण की योग्यता रखता है। वही निश्चय धर्म है। भगवान श्री कृष्ण ने श्री श्रीमद्गीता में उन विषयों की निंदा की है जिनके आसक्ति के कारण मानव अपना पथ भूल जाता है। अर्थात वह असमाजिक तत्वों में पल कर (बिषयासक्त) होकर अपने परम धर्म से च्युत हो जाता है। उससे बचने के लिए श्री कृष्ण के यह वाक्य गीता में उद्धृत हैं।

ध्यायतो विषयान् पुसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात् संजायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते
क्रोधाद् भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति।

विषयों का चिन्तन करने वाले पुरूष की उन-उन विषयोंमें आसक्ति होती हैं। आसक्ति से कामना का उदय होता है। कामना की पूर्ति में बाधा उपस्थित होने पर क्रोध होता है क्रोध से मूढत्व होता है। मूढ़त्व से स्मृति-विभ्रम उपस्थित होता है। स्मृति के नष्ट होने पर बुद्धि का नाश हो जाता है एवं बुद्धि का नाश हो जाने पर मनुष्य का सर्वनाश हो जाता है अतः ये विषय इतने खतरनाक है कि मनुष्य के अधःपतन की ओर ले जाते हैं। नारद भक्ति मे भी कहा गया है

काम क्रोध स्मृति भ्रंशं बुद्धि नाशसर्व।

नाशकारणात्वात्। काम क्रोध मोह, स्मृति भ्रंश, बुद्धिनाश, एवं सर्वनाश का कारण श्रीमद् भागवत महाँपुराण में नारद जी ने धर्म के प्रति आचरण करते हुए इस प्रकार सें धर्म की महत्व को कहते हैं। **बह्वन् धर्मस्य वक्तांह कर्ता तदनुमोदिता।**

तच्छिक्षयँल्लोकमिमास्थितः पुत्र मा खिदुः॥

(श्रीमद्भागवत १०१) अं

नारद मै ही धर्म का उपदेशक उपदेश के अनुसार स्वयं उसका आचरण करने वाला एवम् अनुमोदन करने वाला हूँ। याज्ञवल्क्य

स्मृति में भी मानव धर्म प्रतिपादित किया गया है।

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
दानं दया दमः क्षान्तिः सर्वेषां धर्मसाधनम् ।(याज्ञवाल्क्य स्मृति)

आचारः परमो धर्मः सर्वेषामिति निश्चय :। (वसिष्ठ स्मृति)

वेदों के उद्घोष बड़े ही उदार भावना से मानव धर्म पर अपने विचार देते हैं।

(अपांसि वर्मणि विद्वान)

मानव के हित करने वाले कर्मों के जानें। धर्म शब्द (धृ) धातु से बना है। जिसका अर्थ होता है धारण करना। तात्पर्य यह है जो तत्व संसार के जीवन को धारण करता हैं और उसके बिना विश्व की लोक स्थिति संभव न हों जिससें सब कुछ संयमित सुव्यवस्थित एवं सुचालित होता रहें उसे धर्म कह सकते हैं। चूँकि संसार में मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ नही हैं।

''नहि मनुष्यात् परतरं हि किंचित्''

मानव का श्रृजन ईश्वर ने अपने रचना के अन्तर्गत सर्वोपरि किया है। धर्म सर्वभौम वस्तु है वह किसी व्यक्ति विशेष का नहीं है।

भगवान श्री राम की धर्मज्ञता पर महर्षि बालमीक अपने रामायण में कई स्थलों पर राम की धार्मिक मर्यादा का विषय प्रस्तुत किया है। शत्रु का भाई (रावण) जब उनके शरण में आता है, तब भगवान श्री राम उसे अभयदान दे देते हैं।

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।
अभयं सर्वभूतेंभ्यो ददारयेतद्वतं मम ।।

अर्थात् जो हमारी शरण में आता है तब भगवान श्री राम उसे अभयदान दे देते हैं।

यह है हमारे भारतीय ग्रंथों के अन्तर्गत मानव धर्म वस्तुतः सर्वोपरि धर्म हैं। अर्थात् एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का हित चाहता रहे। (सर्वे भवन्ति सुखिनः) इनके जो वाक्य मिलते हैं। जिससे तर्क की कोई आवश्कयता नही रहजाती हैं कि सबसे परम धर्म मानव धर्म हैं। विश्व के किसी भी महाँपुरूषों के कृतियों में व्यक्तिवादी विचार धाराओं को समाहित नहीं किया गया है। सभी में राष्ट्र हित एवम् मानवोपयेगी उद्धरण प्राप्त होता हैं। वेदों में राजनैतिक धर्म एवं म्रानव धर्म की उपयोगिता प्रत्येक रूपमें इसकी उपयोगिता मानी जायेगी क्यों कि ऋग्वेद में एवं और भी वेदों में संगच्छद्ध्वम् संज्ञानाना अतः वेद की उपयोगिता सबकेलिऐ हैं। अस्तु विनम्र निवेदन करूँगा कि वेदो की उपयोगिता मानव कल्याणार्थ सार्वभौमिक हैं।

विनम्र निवेदन -

वेद किसी मानव की बनाया हुआ नही है यह अपौरसेय होने के कारण साकार परमात्मा का स्वरूप है। वेद मे कर्म उपासना तथा ज्ञान ये तीन काण्ड हैं इन तीनो काण्ड का आशय मानव जाति को दिन रात शास्वत, सुख शान्त और आनंद की प्राप्ती तथा दुख और उसका निवारण करने की चेष्टा है। परमप्रिय का सत्य मार्ग दिखलाना है। अतः यह सभी सन्दर्भो में इसका प्रयोग करने से मानव मात्र के लिये कल्याणकारी सिद्ध हो सकता है।

पं.बालकृष्ण मिश्रा
द्वारा - विवेक कुमार मिश्रा
लोक निर्माण विभाग
सं.क्रं. २ शहडोल (म.प्र.)
४८४००१ (पाण्डवनगर) शहडोल